राजस्थान उच्च न्यायालय, जोधपुर

-:: निर्णय ::-

पी.आर.बोहरा : बनाम : राजस्थान राज्य व अन्य

Reportable

एकल पीठ फौजदारी विविध याचिका संख्या: **1077/2005**

अन्तर्गत धारा 482 दण्ड प्रक्रिया संहिता

* * * * *

निर्णय दिनांक : 23 नवम्बर, 2005

-: उपस्थित :-

माननीय न्यायाधिपति श्री कृष्णकुमार आचार्य

याची के अधिवक्ता श्री श्रीधर पुरोहित,
जन अभियोजक श्री एस.एन.तिवारी, एवं
अयाची संख्या 2 के अधिवक्ता श्री एस.पी.शर्मा, उपस्थित।

यह याचिका धारा 482 दण्ड प्रक्रिया संहिता के तहत अपीलाण्ट-याची पी.आर.बोहरा द्वारा प्रस्तुत की गई है। याचिका पेश होने पर अयाचीगण को नोटिस जारी किए गए, जिनकी ओर से अभिभाषक उपस्थित आए हैं। याचिका के अवलोकन से यह पाया जाता है कि याची ने अयाची संख्या 2 का नाम सन्तोष कुमार लूम्बा लिखा है, जबकि अधीनस्थ न्यायालय के रेकर्ड के अवलोकन से इसका नाम सतीश कुमार लूम्बा पाया जाता है, जो सतीश कुमार लूम्बा ही पढ़ा जावे। ग्रहणार्थ प्रक्रम पर ही दोनों पक्षों को अन्तिम रूप से सुना गया।

तथ्य प्रकरण के संक्षेप में इस प्रकार हैं कि अयाची संख्या 2 द्वारा एक इस्तगासा धारा 138 परक्राम्य लिखत अधिनियम का याची पी.आर.बोहरा के विरूद्ध अपर मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट (आर्थिक

अपराध), जोधपुर के न्यायालय में प्रस्तुत किया, जिसमें उसे दोषी करार दिया गया, जिसकी अपील उसके द्वारा सेशन न्यायालय में पेश की गई जो अपर सेशन न्यायाधीश संख्या-1, जोधपुर में विचाराधीन है। पूर्व में अपील न्यायालय द्वारा पारित आदेश दिनांक 21.8.2004 की नाराजगी में याची द्वारा एक याचिका धारा 482 दण्ड प्रक्रिया संहिता के तहत इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत की गई थी जिसमें 17.7.04 एवं 17.8.04 के प्रार्थना-पत्र जो खारिज किए गए थे, के सम्बन्ध में इस्तदुआ की गई थी। वह याचिका इस न्यायालय द्वारा विस्तृत आदेश से 22.7.05 को खारिज की गई। उस याचिका में बहस के दौरान यह भी बिन्दु उठाया गया था कि अधीनस्थ न्यायालय में धारा 386 (बी)(1) सपठित धारा 391 दण्ड प्रक्रिया संहिता का प्रार्थना-पत्र लम्बित है, उसका निस्तारण नहीं किया गया, जो अपील के निस्तारण के साथ रखा हुआ है। इस न्यायालय ने हिदायत दी थी कि याची चाहे तो उस प्रार्थना-पत्र की अपील के पूर्व सुनवाई हेतु इस्तदुआ कर सकता है। अपील न्यायालय इस प्रार्थना-पत्र पर विचार करके कानून अनुसार कार्यवाही करेगा। तत्पश्चात् अधीनस्थ न्यायालय के समक्ष प्रार्थना-पत्र दिनांक 26.7.05 को अपीलाण्ट द्वारा प्रस्तुत किया गया जिसमें इस न्यायालय के आदेश दिनांक 22.7.05 का हवाला देते हुए यह इस्तदुआ की गई कि अपील की सुनवई के पूर्व धारा 386 (बी)(1) सपठित धारा 391 के प्रार्थना-पत्र का निस्तारण किया जावे। इस प्रार्थना-पत्र को अधीनस्थ न्यायालय द्वारा अपने आदेश दिनांक 12.9.05 के द्वारा यह कहकर खारिज कर दिया कि अपील की सुनवाई के साथ ही धारा 386 (बी)(1) सपठित धारा 391 दण्ड प्रक्रिया संहिता के प्रार्थना-पत्र का निस्तारण किया जा सकता

है। अधीनस्थ न्यायालय का यह स्पष्ट विचार था कि यदि अपील की सुनवाई के समय न्यायालय को उचित प्रतीत हुआ तो प्रकरण को पुन: विचारण किए जाने का आदेश पारित किया जा सकेगा अथवा अतिरिक्त साक्ष्य लेखबद्ध किए जाने का आदेश पारित किया जा सकेगा। मगर अपील की सुनवाई के पूर्व यह प्रार्थना-पत्र तय नहीं किया जा सकता। उपरोक्त आदेश की नाराजगी में यह याचिका प्रस्तुत की गई है।

इस याचिका पर दोनों पक्षों की बहस सुनी गई, पत्रावली का अवलोकन किया व विचार किया।

योग्य अभिभाषक याची की ओर से प्रथम तर्क यह रहा कि अधीनस्थ न्यायालय में जो प्रार्थना-पत्र दिनांक 26.7.05 को प्रार्थी-अपीलाण्ट ने पेश किया था उसका जवाब 8.8.05 को पेश किया गया और प्रार्थना-पत्र की बहस के लिए 16.8.05 को पत्रावली रखी गई। दिनांक 16.8.05 को यह आदेश पारित किया गया कि अपीलार्थी द्वारा प्रस्तुत प्रार्थना-पत्र अन्तर्गत धारा 386 (बी)(1) सपठित धारा 391 दण्ड प्रक्रिया संहिता पर बहस अपील से पहले सुने जाने का स्वीकार किया गया। धारा 386 (बी)(1) सपठित धारा 391 के प्रार्थना-पत्र का जवाब प्रस्तुत करने का समय चाहा गया, उसके बाद 2.9.05 को इसका जवाब भी प्रस्तुत हुआ और इस प्रार्थना-पत्र पर दोनों पक्षों को सुना जाकर धारा 386 (बी)(1) सपठित धारा 391 दण्ड प्रक्रिया संहिता का प्रार्थना-पत्र खारिज किया गया और आदेश में लिखा गया कि अपील के निस्तारण के समय ही इसका निस्तारण किया जा सकता है। उनका तर्क था कि फौजदारी न्यायालय को अपने आदेश को रिव्यू करने का अधिकार नहीं है। इस सम्बन्ध में उन्होंने (2004) 7 सुप्रीम कोर्ट केसेज 338

(अदालत प्रसाद बनाम रूपलाल जिन्दल वगै.) एवं 2005 (3) आर डी डी 238 (राज.) (नरेन्द्र नलवाया बनाम ईश्वरलाल) पर आए विनिश्चय प्रस्तुत किए।

इसके जवाब में योग्य अभिभाषक अयाची संख्या 2 द्वारा बहस की गई कि याची ने अधीनस्थ न्यायालय में धारा 386 (बी)(1) सपठित धारा 391 दण्ड प्रक्रिया संहिता के प्रार्थना-पत्र पर बहस अव्वल में सुनने की इस्तदुआ की थी, जिसे अधीनस्थ न्यायालय ने अपील के पहले इस प्रार्थना-पत्र पर बहस सुनना स्वीकार किया और इस प्रार्थना-पत्र पर बहस सुनी जाकर यह प्रार्थना-पत्र दिनांक 12.9.05 को खारिज किया गया है। इस प्रकार अधीनस्थ न्यायालय द्वारा कोई भी अपने पूर्व के आदेश को रिव्यू नहीं किया है बल्कि दिनांक 16.8.05 को धारा 386 (बी)(1) सपठित धारा 391 दण्ड प्रक्रिया संहिता के प्रार्थना-पत्र पर बहस अपील से पहले सुनने का ही आदेश दिया था और इस माननीय न्यायालय द्वारा भी मात्र यही आदेश दिया गया था कि धारा 386 (बी)(1) सपठित धारा 391 दण्ड प्रक्रिया संहिता के प्रार्थना-पत्र, जो लम्बित है और अपील के साथ निस्तारण के लिए रखा हुआ है, इस प्रार्थना-पत्र की अपील के पूर्व सुनवाई हेतु इस्तदुआ कर सकता है। इस माननीय न्यायालय द्वारा यह आदेश नहीं दिया गया था कि अपील की सुनवाई के पूर्व ही धारा 386 (बी)(1) सपठित धारा 391 दण्ड प्रक्रिया संहिता के सम्बन्ध में बहस सुनी जावे। इस प्रकार अधीनस्थ न्यायालय द्वारा कोई भी आदेश को रिव्यू नहीं किया गया है। उन्होंने अपील न्यायालय के क्षेत्राधिकार के सम्बन्ध में धारा 386 दण्ड प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों की ओर भी ध्यान आकर्षित किया और तर्क किया कि अपील की सुनवाई के साथ ही धारा 386 (बी)(1) सपठित धारा 391 दण्ड प्रक्रिया संहिता के तहत

आदेश दिया। बिना अपील की सुनवाई किए स्वतंत्र रूप से इस सम्बन्ध में सुनवाई नहीं की जा सकती थी कि मात्र रिमाण्ड के लिए ही बहस सुनी जावे।

इस सम्बन्ध में मेरे द्वारा दोनों पक्षों के तर्को पर विचार किया गया। योग्य अभिभाषक याची द्वारा प्रस्तुत विनिश्चय, अदालत प्रसाद बनाम रूपलाल जिन्दल वगै. (उपरोक्त) एवं नरेन्द्र नलवाया बनाम ईश्वरलाल (उपरोक्त), का मेरे द्वारा आदर पूर्वक अवलोकन किया गया। उक्त विनिश्चयों में यह स्पष्ट सिद्धान्त है कि फौजदारी न्यायालयों को अपने ही निर्णय को रिव्यू करने का क्षेत्राधिकार अधिकार नहीं है और यह कानून की स्थिति स्पष्ट है, जिसे मैं आदर पूर्वक स्वीकार करता हूं। मगर इस प्रकरण में क्या अधीनस्थ न्यायालय द्वारा अपने आदेश को रिव्यू किया गया है अथवा नहीं, अव्वल में देखना है। इस न्यायालय द्वारा प्रकरण को रिमाण्ड करने के बाद अधीनस्थ न्यायालय के समक्ष 26.7.05 को धारा 386 (बी)(1) सपठित धारा 391 दण्ड प्रक्रिया संहिता के प्रार्थना-पत्र की सुनवाई अपील से पूर्व करने बाबत आदेश हुआ, जिसकी नकल प्रत्यर्थी के अभिभाषक को दी गई। दिनांक 8.8.05 को प्रत्यर्थी ने प्रार्थना-पत्र का जवाब पेश किया जिसकी नकल अपीलार्थी के अभिभाषक को दिलाई गई एवं पत्रावली वास्ते बहस दिनांक 16.8.05 को रखी गई। योग्य अपर सेशन न्यायाधीश सं.1, जोधपुर द्वारा दिनांक 16.8.05 को निम्न आदेश पारित किया गया :

"16.8.05 वकुलाय पक्षकारान उपस्थित।

अपर लोक अभियोजक उपस्थित।
अपीलार्थी बर जमानत उपस्थित। प्रत्यर्थी उपस्थित। अपीलार्थी द्वारा प्रस्तुत प्रार्थना पत्र के

> प्रार्थना पत्र अन्तर्गत धारा 386 "बी" (1) सपठित धारा 391 दं.प्र.सं. पर बहस अपील से पहली सुनी जाय, स्वीकार किया गया।
>
> विद्वान अधिवक्ता प्रत्यर्थी प्रार्थना पत्र अन्तर्गत धारा 386 "बी" (1) सपठित धारा 391 दं.प्र.सं. का जवाब प्रस्तुत करना चाहते हैं।
>
> पत्रावली वास्ते जवाब एवं बहस प्रार्थना पत्र 02/9/05 को पेश हो।"

तत्पश्चात् 2.9.05 को प्रार्थना पत्र अन्तर्गत धारा 386 "बी" (1) सपठित धारा 391 दं.प्र.सं. का जवाब पेश हुआ और इस पर बहस सुनी गई और दिनांक 12.9.05 को धारा 386 "बी" (1) सपठित धारा 391 दं.प्र.सं. का प्रार्थना-पत्र खारिज किया गया। इस प्रकार योग्य अभिभाषक अपीलाण्ट-याची का यह तर्क कि दिनांक 16.8.05 को धारा 386 "बी" (1) सपठित धारा 391 दं.प्र.सं. के प्रार्थना-पत्र पर बहस अपील से पहले सुनी जाएगी, आदेश को अधीनस्थ न्यायालय ने 12.9.05 को आदेश पारित कर रिव्यू कर दिया है। मगर मैं उनके तर्को से कतई सहमत नहीं। धारा 386 "बी" (1) सपठित धारा 391 दं.प्र.सं. के प्रार्थना-पत्र पर बहस अपील की सुनवाई के पूर्व करना स्वीकार किया गया और इस प्रार्थना-पत्र पर बहस सुनने के बाद यह विवादित आदेश दिनांक 12.9.05 को पारित किया और इसमें अधीनस्थ न्यायालय ने स्पष्ट माना है कि अपील की सुनवाई के साथ ही धारा 386 "बी" (1) सपठित धारा 391 दं.प्र.सं. के तहत आदेश दिया जा सकता है, इस स्टेज पर बिना अपील की सुनवाई के इस प्रकार का आदेश दिया जाना सम्भव नहीं है। इस प्रकार यह पूर्व के आदेश की किसी प्रकार से पुनर्विलोकन करने या आदेश को वापस लेने की तारीफ में नहीं आता। मेरे द्वारा धारा 386 "बी" (1) दण्ड प्रक्रिया संहिता का अवलोकन किया गया, जो निम्न प्रकार है :

"386. Powers of Appeallate Court. .....
(a) .....
(b) in an appeal from a conviction -
(i) reverse the finding and sentence and acquit or discharge the accused, or order him to be re-tired by a Court of competent jurisdiction subordinate to such Appellate Court or committed for trial, or

धारा 391 दं.प्र.सं. का भी मेरे द्वारा अवलोकन किया गया जो निम्न प्रकार है :

"391. **Appellate Court may take further evidence or direct it to be taken.-** (1) In dealing with any appeal under this Chapter, the Appellate Court, if it thinks additional evidence to be necessary, shall record its reasons and may either take such evidence itself, or direct it to be necessary, shall record its reasons and may either take such evidence itself, or direct it to be taken by a Magistrate, or when the Appellate Court is a High Court, by a Court of Session or a Magistrate.
(2) When the additional evidence is taken by the Court of Session or the Magistrate, it or he shall certify such evidence to the Appellate Court, and such Court shall thereupon proceed to dispose of the appeal.
(3) The accused or his pleader shall have the right to be present when the additional evidence is taken.
(4) The taking of evidence under this section shall be subject to the provisions of Chapter XXIII, as if it were an inquiry."

उपरोक्त प्रावधानों के अवलोकन से स्पष्ट है कि रेकर्ड के अवलोकन के बाद और अपीलाण्ट और अभियोजक को सुनने के बाद ही धारा 386 "ए" से लगायत "ई" तक के तहत कोई भी आदेश पारित किया जा सकता है, जो धारा 386 दण्ड प्रक्रिया संहिता में निर्दिष्ट किया गया है। बिना अपील की सुनवाई किए स्वतंत्र रूप से मात्र धारा 386 "बी" (1) दण्ड प्रक्रिया संहिता के तहत कोई आदेश पारित नहीं कर सकता। परन्तु साक्ष्य लेने का कोई प्रश्न है अथवा नहीं, वह अपील न्यायालय स्वतंत्र रूप से विचार कर सकता है, जो

धारा 391 दण्ड प्रक्रिया संहिता में दिया गया है, मगर वह भी इस चेप्टर में अपील में सुनवाई के प्रावधानों को देखने के बाद ही।

इस सम्बन्ध में माननीय उच्चतम न्यायालय का विनिश्चय 2005 ए आई आर एस सी डब्ल्यू 4935 (स्टेट ऑफ एम.पी. बनाम मखमल खान वगै.) विनिश्चय को उद्धृत करना चाहूंगा, जिसके पैरा 8 में निम्न सिद्धान्त प्रतिपादित किया गया है:

> "8. Chapter XXIX of Code of Criminal Procedure deals with APPEALS. Section 384, Cr.P.C. empowers the appellate Court to dismiss an appeal summarily if it considers that there is no sufficient ground for interference. Section 385, Cr.P.C. gives the procedure for hearing appeals not dismissed summarily and Section 386, Cr.P.C. gives the powers of the appellate Court. In Amar Singh v. Balwinder Singh 2003 (2) SCC 518, the duty of the appellate Court while hearing a criminal appeal in the light of the aforesaid provisions was explained and para 7 of the report reads as under:
>
> "7. The learned Sessions Judge after placing reliance on the testimony of the eye-witnesses and the medical evidence on record was of the opinion that the case of the prosecution was fully established. Surprisingly, the High Court did not at all consider the testimony of the eye witnesses and completely ignored the same. Section 384, Cr.P.C. empowers the Appellate Court to dismiss the appeal summarily if it considers that there is no sufficient ground for interference. Section 385 Cr.P.C. lays down the procedure for hearing appeal not dismissed summarily and sub-section (2) thereof casts an obligation to send for the records of the case and to hear the parties. Section 386 Cr.P.C. lays down that after perusing such record and hearing the appellant or his pleader and the Public Prosecutor, the Appellate Court may, in an appeal from conviction, reverse the finding and sentence and acquit or discharge the accused or order him to be re-tired by a Court of competent jurisdiction. It is, therefore, mandatory for the Appellate Court to peruse the record which will necessarily mean the statement of the witnesses. In a case based upon direct eye-witness account, the testimony of the eye-witnesses is of paramount importance and if the Appellate Court reverses

the finding recorded by the Trial Court and acquits the accused without considering or examining the testimony of the eye-witnesses, it will be a clear infraction of Section 386, Cr.P.C. In Biswanath Ghosh v. State of West Bengal & Ors., AIR 1987 SC 1155 it was held that where the High Court acquitted the accused in appeal against conviction without waiting for arrival of records from the Sessions Court and without perusing evidence adduced by prosecution, there was a flagrant miscarriage of justice and the order of acquittal was liable to be set asied. It was further held that the fact that the Public Prosecutor conceded that there was no evidence, was not enough and the High Court had to satisfy itself upon perusal of the records that there was no reliable and credible evidence to warrant the conviction of the accused. In State of U.P. v. Sahai & Ors., AIR 1981 SC 1442 it was observed that where the High Court has not cared to examine the details of the intrinsic merits of the evidence of the eye-witnesses and has rejected their evidence on the general grounds, the order of acquittal passed by the High Court resulted in a gross and substantial miscarriage of justice so as to invoke extra-ordinary jurisdiction of Supreme Court under Article 136 of the Constitution."

उपरोक्त कानून की स्थिति देखने से स्पष्ट है कि बिना अपील की सुनवाई किए स्वतंत्र रूप से धारा 386 "बी" (1) दं.प्र.सं. के तहत कोई भी आदेश पारित नहीं किया जा सकता और जो प्रक्रिया माननीय उच्चतम न्यायालय ने उपरोक्त विनिश्चय में निर्धारित की है उसी के अनुसार अपील की सुनवाई की जा सकती है। जहां तक धारा 391 दण्ड प्रक्रिया संहिता के तहत अपील न्यायालय द्वारा स्वयं कोई साक्ष्य लेने का प्रश्न है, प्रार्थना-पत्र में तथ्य अवश्य लिखे गए थे, मगर अधीनस्थ न्यायालय में कभी भी यह इस्तदुआ नहीं की गई, जो प्रार्थना-पत्र के अवलोकन से स्पष्ट होता है। मात्र प्रकरण को रिमाण्ड करने की ही इस्तदुआ की गई थी, मगर धारा 391 दं.प्र.सं. के प्रार्थना-पत्र के निस्तारण के लिए भी अपील न्यायालय को अपील में कुछ अंशों तक सुनवाई करना आवश्यक होती है ताकि दस्तावेजात की

सुसंगतता मालूम हो सके।

इस प्रकार योग्य अभिभाषक अपीलाण्ट-याची द्वारा प्रथम तर्क से कि आदेश को अपील न्यायालय द्वारा अपने आदेश को रिव्यू किया गया है और धारा धारा 386 "बी" (1) सपठित धारा 391 दं.प्र.सं. के प्रार्थना-पत्र पर बहस अपील से पहले सुनवाई की जानी चाहिए, इसमें मैं कोई सार नहीं पाता। बिना अपील की सुनवाई किए, उपरोक्त कानून की स्थिति को देखते हुए धारा 386 "बी" (1) के तहत कोई आदेश पारित नहीं किया जा सकता।

योग्य अभिभाषक याची का दूसरा तर्क प्रार्थना-पत्र के गुणावगुण के सम्बन्ध में रहा है कि उनके पास प्रथम दृष्टया केस प्रकरण के रिमाण्ड करने के सम्बन्ध में व अतिरिक्त साक्ष्य लेने के सम्बन्ध में है। इस सम्बन्ध में मेरे द्वारा प्रार्थना-पत्र का अवलोकन किया गया और जवाब, जो अधीनस्थ न्यायालय में प्रस्तुत हुआ, उसका भी अवलोकन किया गया।

योग्य अभिभाषक याची का तर्क है कि दिनांक 4.3.04 को अधीनस्थ न्यायालय में निर्णय के पूर्व एक प्रार्थना-पत्र पेश किया गया था जिसमें मुस्तगीस को पुन: बुलाकर, जो दस्तावेजात थे उसके सम्बन्ध में, जिरह करने की इजाजत चाही थी, जिसमें रसीद दिनांक 18.10.2000, बैंक स्टेटमेण्ट मुल्जिम का और डायरी जिसमें परिवादी द्वारा ली गई समय-समय पर धनराशि का इन्द्राज है और नोटिस दिनांक 12.3.03 है। उनका तर्क है कि यह प्रार्थना-पत्र स्वीकार किया गया मगर इसके बावजूद भी मुस्तगीस को नहीं बुलाया न जिरह की इजाजत दी, अत: उनके पास प्रथम दृष्टया केस है, मुस्तगीस को तलब करना चाहिए था। उनका यह भी तर्क है कि निर्णय के

बाद एक प्रार्थना-पत्र भी मुस्तगीस के द्वारा निर्णय में संशोधन करने के सम्बन्ध में 18.3.04 को दिया था जिसका नोटिस अभियुक्त को दिया गया और वह प्रार्थना-पत्र अभी भी लम्बित है, अत: उनका तर्क है कि इन आधारों पर प्रकरण रिमाण्ड होना चाहिए था।

इस सम्बन्ध में योग्य अभिभाषक अयाची को भी सुना गया। प्रार्थना-पत्र बाबत संशोधन करने निर्णय का अवलोकन किया। यह प्रार्थना-पत्र अपर मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट (आर्थिक अपराध), जोधपुर के न्यायालय में लम्बित होना बताया गया है, मगर इस सम्बन्ध में प्रकरण रिमाण्ड करने की आवश्यकता नहीं रहती, यदि अधीनस्थ न्यायालय में रिव्यू का प्रार्थना-पत्र लम्बित है और इस सम्बन्ध में दोनों ही पक्ष अपील न्यायालय में इस्तदुआ करते हैं तो इस प्रार्थना-पत्र के निस्तारण के लिए मूल पत्रावली अधीनस्थ न्यायालय में भिजवाई जा सकती है, इसमें कोई भी कानूनी रूकावट नहीं है। फौजदारी निर्णयों में ऐसे रिव्यू करने के प्रावधान नहीं है, मगर कोई भी क्लेरिकल त्रुटि रही है, उसकी दुरूस्ती कानून के अनुसार की जा सकती है। इस प्रकार इस प्रार्थना-पत्र के लम्बित होने के सम्बन्ध में अपील न्यायालय में याची चाहे तो ध्यान आकर्षित कर सकता है और अभी भी प्रार्थना-पत्र लम्बित हो तो अपील न्यायालय इस प्रार्थना-पत्र को निस्तारण करने का निर्देश अधीनस्थ न्यायालय को दे सकता है क्योंकि यह प्रार्थना-पत्र अधीनस्थ न्यायालय में लम्बित था जो कि अधीनस्थ न्यायालय द्वारा सुनाए गए निर्णय के कुछ तथ्यों के रिव्यू के सम्बन्ध में है।

जहां तक गुणावगुण पर जो बहस की गई है, यह न्यायालय कोई भी गुणावगुण पर इस स्टेज पर निर्देश देने में सक्षम नहीं है न मैं कोई निर्देश देना उचित समझता हूं। अपील न्यायालय अपीलीय शक्तियों का इस्तेमाल करते हुए दोनों पक्षों को सुनकर निर्णय करेगा और प्रार्थना-पत्र में जो मुद्दा उठाया गया है, आया ऐसा कोई प्रार्थना-पत्र अधीनस्थ न्यायालय में पेश किया गया था जिसमें मुस्तगीस को पुन: जिरह करने के लिए तलब करने की स्वीकृति दी गई और उसके बाद भी उसे तलब नहीं किया, उसका क्या असर होगा, ये तमाम तथ्य अपील के गुणावगुण पर सुनवाई के समय ही अपील न्यायालय निस्तारित कर सकता है और अपील न्यायालय अपनी शक्तियों का इस्तेमाल करते हुए अपील का निस्तारण कर सकता है। अपील न्यायालय को क्या निर्णय किया जाना है, यह न्यायालय किसी प्रकार का कोई कमेण्ट गुणावगुण पर करना उचित नहीं समझता। आया यह प्रकरण अतिरिक्त साक्ष्य लेने का है या प्रकरण रिमाण्ड करने का है या अपील के गुणावगुण पर निस्तारित करने का है, इन सभी बिन्दुओं पर अपील न्यायालय को ही निर्णय लेना है। अत: प्रकरण के गुणावगुण पर जो बहस की गई है, गुणावगुण पर मैं किसी प्रकार का कमेण्ट करना उचित नहीं समझता।

उपरोक्त तमाम विवेचन से, मैं इस याचिका में कोई बल नहीं पाता। जहां तक अधीनस्थ न्यायालय में निर्णय में संशोधन का प्रार्थना-पत्र दिनांक 18.3.04 का जो लम्बित होना बताया है, इस सम्बन्ध में पक्षकार अपील न्यायालय का ध्यान आकर्षित कर सकते हैं और अपील न्यायालय यदि

कोई प्रार्थना-पत्र निर्णय को रिव्यू के सम्बन्ध में अधीनस्थ न्यायालय में लम्बित है, उस पर उचित आदेश पारित करने के लिए रेकर्ड अधीनस्थ न्यायालय में भिजवा सकता है, इसमें कोई रूकावट नहीं है।

उपरोक्त हिदायत के साथ, यह याचिका खारिज की जाती है।

(न यायाधिपति कृष णकुमार आचार्य)

<u>जी.एन.शर्मा</u>